राजर्षि अम्बरीष सम्बन्धि विविध अख्यानों का विमर्श

Raajarshi ambareesh sambandhee vividh aakhyaanon ka vimarsh

ओंकार शामसुन्दर जोशी संचालक, श्रेया स्वरूप प्रभुणे[2)]
Omkar Shamsundar Joshi, Shreya Swaroop Prabhune
[1)]वैदिक संशोधन मंडळ (आदर्श संस्कृत शोध संस्था), पुणे,
Vedic Samvidhan Mandal (Adarsh Sanskrit Research Institute), Pune,
[2)]मैत्रेयी एज्युसोल, मुंबई,
Maitreyi Ejusol, Mumbai,
*Corresponding author email: onkar.joshi87@gmail.com

शोधसार

भारतभूमि की पहचान अत्रि, भारद्वाज, वसिष्ठ, विश्वामित्र इत्यादि ऋषियों से है। जिन्होनें साक्षात् वेद देखें है उन्हे ऋषि कहते है। वैदिक काल से आधुनिक काल तक अनेक ऋषियोंने इस पवित्र भूमि पर अपना योगदान दिया है। ऋषियों का यह ज्ञान हमें वैदिक साहित्य से आधुनिक साहित्य तक ग्रंथों में प्राप्त होता है। इन ऋषिपरम्पराओं में एक ऋषि अम्बरीष हैं, जिनका संदर्भ हमें वैदिक वाङ्मय, पुराण, आर्षमहाकाव्य इत्यादि अनेक साहित्यग्रंथों में प्राप्त होता है। कई संदर्भों में राजा से ऋषि तक की यात्रा तथा ऋषिसे राजा तक की यात्रा एवं वर्णन प्राप्त होते हैं। अतः राजर्षि उपाधिसे ही उनके राजकुल और ऋषिकुल के बारे में विशेष जानकारी मिलती है। इन संदर्भों के आधारपर प्रस्तुत शोधपत्र में चर्चा की जायेगी ।

प्रमुख शब्द - अम्बरीष, राजर्षि, पौराणिक कथाएँ, लोककथाएँ

Abstract

Bharatbhumi is known for sages like Atri, Bharadwaj, Vasishtha, Vishwamitra etc. Those who have seen the Vedas are called sages. From Vedic period to modern period, many sages have contributed to this holy land. We get this knowledge of sages in texts ranging from Vedic literature to modern literature. In these Rishi traditions, one sage is Ambrish, whose reference is found in many literary texts like Vedic literature, Puranas, Arsha Mahakavya etc. In many references, the journey from king to sage and the journey from sage to king and description are found. Therefore, special information about his royal family and Rishikul is obtained from the title of Rajarshi. Discussion will be done in this research paper on the basis of these references.

Key words: Ambrish, Rajarshi, mythological stories, folktales.

१. अम्बरीष शब्द का आर्थ -

अम्बरीष इस पद के लगभग १९ अर्थ प्राप्त होते है। क्रमशः उनके बारे में जान लेते है। अमरकोश में पश्चात्ताप, विष्णु, शिव, आम्रातक (The hog-plum plant) (Spondias Magnifera)[2] यह ४ अर्थ प्राप्त होते है। बछड़ा[3] यह अर्थ अमरकोश और नानार्थसंग्रह दर्शाते हैं। अमरकोश और धरणीकोश मे युद्ध[4] यह महत्त्वपूर्ण अर्थ प्राप्त होता है। आम्रातक यह पर्यायवाची शब्द मेदिनीकोष[5] में मिलता है। सूर्य यह अर्थ नानार्थसंग्रह[6] और रामायण[7] ग्रंथ में सूचित है।

''अम्बरीष भवेद् भ्राष्ट्र इति विश्वः। अम्बरीषोपमं दीप्तं विधूम इव पावकः।''

तैत्तिरीय संहिता[8], आपस्तम्ब[9], बौधायन[10], शांखायन[11] इन सभी श्रौतसूत्रों मे, गोभील[12] द्राह्यायन[13] इत्यादी गृह्यसूत्रों में, वाल्मिकी रामायण[14], अर्थशास्त्र[15] ,विष्णुपुराण[16]इन सभी ग्रंथों में भ्राष्ट्रपात्र यह एक वैशिष्ट्यपूर्ण अर्थ दिखाई देता है। कथासरित्सागर[17] इस ग्रंथ में गणेशजी का एक नाम अम्बरीष है। स्कन्दपुराण[18]में तीर्थस्थान के नाम से अम्बरीष यह पद प्रयुक्त किया गया है। जैन साहित्य

---

[2]Monnior Williams Dictionary

[3]अन्तशय्या श्मशाने स्यात्, भूशय्यायामपि क्वचित् ।अमरकोश 1767.
अम्बरीशस्तैलिन्यां (स्तु राजन्ये) सूर्ये हयकिशोरके ।। नानार्थसंग्रह 2.18

[4] अम्बरीशं रणे भ्राष्ट्रे जीवितेशो यमे प्रिये । धरणीकोश 2585

[5]नरकस्य प्रभेदे च किशोरे भास्करेऽपि च ।
आम्रातकेऽनुतापे चानिमेषो मत्स्यदेवयोः ।। मेदिनीकोष१८४.४९

[6]अन्तशय्या श्मशाने स्यात्, भूशय्यायामपि क्वचित् ।
अम्बरीशस्तैलिन्यां (स्तु राजन्ये) सूर्ये हयकिशोरके ।। ना.सं. 2.18

[7] भुजगाचारितां गुप्तां शुभां भोगवतीमिव ।
तां सविद्युद्घनाकीर्णां ज्योतिर्मार्गनिषेविताम्।। वाल्मीकि रामायण ५.३.५

[8] अम्बरीषादन्नंकामस्यावंदध्याद् । अम्बरीषे वा अन्नं भ्रियते । तैत्तिरीय संहिता V.i.9.4

[9] अम्बरीषादन्नकामस्य वृक्षाग्राज्ज्वलतो ब्रह्मवर्चसकामस्य । आपस्तम्भ श्रौतसूत्र.v.14.3

[10] उत्तरतोऽग्न्यगारस्याम्बरीषं कुर्यादिति बौधायनः । बौधायन श्रौतसूत्र iii.34.6
संप्रच्छन्ना अम्बरीष वोत्तपनीयं वाभिप्रव्रपन्ति । बौ.श्रौ. i.44.2

[11] शांखायन श्रौतसूत्र .i.1.8

[12] वैश्यकुलात् वा अम्बरीषात् अग्निम् आहृत्य अभ्यादद्यात्। गोभिल गृह्यसूत्र.i.1.15

[13] अम्बरीषात् वा आनयेत् । द्राह्यायन गृह्यसूत्र.i.5.4

[14] अशोभत मुखं तस्य जृम्भमाणस्य धीमतः। अम्बरीषोपमं दीप्तं विधूम इव पावकः।।(अम्बरीषं भ्राष्ट्रम्)क्लीबेऽम्बरीषं भ्राष्ट्रो ना इति अमरः। वा.रा. ४.६६.४.

[15] कौटिलीय अर्थशास्त्र 2.3(123.2)

[16] विष्णुपुराण vi.3.27

[17] कथासरित्सागर ९.५.१६५

[18] स्कन्दपुराण ४.६१.१२, ४.८४.१६, ५.३.२८, २.४.३३

में यह एक नरक का प्रकार है ऐसा भी एक मत है। महाभारत और वायुपुराण[19] में यह नाग[20] का एक नाम है ऐसा भी सूचित किया गया है।

२. ऋषि

ऋग्वेद में अम्बरीष का उल्लेख ऋषि[21]के अर्थ में होता है। मत्स्यपुराण[22], ब्रह्मांडपुराण[23],वायुपुराण[24], Epigraphica Indica[25] इन ग्रंथों ये में अङ्गिरस गोत्र के ऋषि माने गये है। अग्निपुराण[26] और वायुपुराण[27] में पुलस्त्य और क्षमा का पुत्र अम्बरीष कहलाता है।

३. राजा अम्बरीष

अम्बरीष अयोध्या के सूर्यवंशी इक्ष्वाकुवंशीय परमवीर राजा थे। यह भगीरथ के प्रपौत्र, वैवस्वत मनु के पौत्र और नभाग[28] के पुत्र थे। महाभारत[29]और भागवत[30] में भी अम्बरीष को नभाग का पुत्र माना गया है।
ये सभी सगर,[31] राजा दशरथ और भगवान रामचन्द्र के पूर्वज हैं।

४. राजर्षि अम्बरीष

अम्बरीष का ऋग्वेद[32] में ऋज्राश्व, सहदेव, सुराधस् और भयमान के साथ एक वार्षागिर[33]के रूप में उल्लेख है। ऋग्वेद १.१००, ९.९८ इन दो सूक्तों के अम्बरीष ये रचनाकार है। राजर्षि यह उल्लेख कूर्मपुराण[34], स्कन्दपुराण[35]और Epigraphia Indica[36] में लक्षित किया गया है।

---

19 तेषां प्रधाननागाश्च ... कपिलाश्चाम्बरीषश्च धृतपादः ... काद्रवेयाः। वायुपुराण.ii.8.70.

20 अम्बरीषः स्वयं राजा वरुणश्चापि राजन् । प्रत्युद्गम्य स्वागतेनाभ्यनन्दन् ।महाभारत .xvi.5.15

21 ऋग्वेद १.१००.७

22मत्स्यपुराण १४५.१०२,

23 ब्रह्माण्डपुराण १.३२.१०८, २.३४.३९

24 पुरुकुत्सोथ मान्धाना अम्बरीषस्तथैव च / अङ्गीरसां वराः/एते मन्त्रकृतः सर्वे ।वायुपुराण.i.59.99

25 EI.xi.145.35-40

26 अग्निपुराण ४.३४

27 वा.पु. २८.२६

28 नाभागस्यात्मजो नाभागसंज्ञोऽभवत् । तस्याप्यम्बरीषः। वि.पु.. Iv.2.6, अम्बरीषस्तु नाभागिः। विष्णुधर्मोत्तरपुराण।i.23.3

29 अम्बरीषं च मृतं सृञ्जय शुश्रुम । महा. VII Appendix.8.58 ,
अम्बरीषश्च नाभाग इष्टवान्यमुतामनु ।महा. iii.129.2

30 अम्बरीषस्तु नाभागिर्विरुपस्तस्य चात्मजः वा.पु.. ii.26.6, अम्बरीषोऽभवत्पुत्रः पार्थिवर्षभसत्तम। हरिवंश i.9.21

31 EI.iv.235.60

32.ऋ. १.१००, ९.९८।

33 उक्थं) वार्षागिरा अभि गृणन्ति राधः। ऋज्राश्वः अष्टिभिरम्बरीषः सहदेवो भयमानः सुराधाः। ऋ. 100.17

34 कूर्मपुराण ७७७.१५।

35 स्कन्दपुराण २.४.३३।

36 EI.xviii.17. EI.iii.342.01, iii.342.10,iii.45.38

राजा अम्बरीष की कथा रामायण, महाभारत और पुराणों में विस्तार से वर्णित है। उन्होंने दशसहस्र राजाओं को पराजित करके ख्याति अर्जित की थी। वे विष्णुभक्त थे और अपना अधिकांश समय धार्मिक अनुष्ठानों में लगाते थे। पुराणों में इन्हे परमवैष्णव कहा गया है। नारदमुनि के कहने पर राजा अम्बरीष ने एक वर्ष तक सभी एकादशियों का व्रत किया था । व्रतों का उद्यापन आषाढ़ी एकादशी के दूसरे दिन याने की द्वादशी के दिन किया था।

५. प्रथम कथा

रामायण में राजा हरिश्चंद्र के बारे में ऐतरेय ब्राह्मण कथा[37] का एक रूपांतर मिलता है। रामायण के बालकाण्ड में राजा का नाम हरिश्चंद्र के स्थानपर अम्बरीष रखा गया है। इस कथा के अनुसार, अम्बरीष एक बार अपनी राजधानी अयोध्या में अश्वमेध यज्ञ कर रहे थे। इस समारोह के दौरान, अश्वमेध का घोड़ा इंद्र द्वारा चुरा लिया गया था। समारोह का संचालन करने वाले पुरोहित ने राजा से कहा कि उन्हें पशु को खोजने की जरूरत है अथवा इस स्थिति से उत्पन्न दुर्भाग्य को टालने के लिए मानवबलि देनी होगी। पशु को खोजने में असमर्थ होने के पश्चात् , राजा ने भृगुतुङ्ग पर्वत पर ऋषि ऋचीक को बहुत धन देकर यज्ञ-पशु के रूप में बलि के लिए उनके मझले पुत्र शुन:शेप को खरीद लिया । शुनःशेप ने ऋषि विश्वामित्र से प्रार्थना की और कहा कि आप राजा अम्बरीष को कृतार्थ करें और मैं भी विकाररहित दीर्घायु हो जाऊ। ऋषि विश्वामित्र द्वारा दिए गए दो दिव्यगाथाओंका पाठ करके शुनःशेप ने स्वयं को बलिदान से बचा लिया ।[38]

ऋषियों ने अम्बरीष को अंधकारवृत्त होने का शाप दिया किन्तु विष्णु के सुदर्शन चक्र ने अंधकार का विनाश किया। वाल्मीकि रामायण के बालकांड और लिंगपुराण (2.5.6) के अनुसार अम्बरीष और हरिश्चंद्र एक ही व्यक्ति के नाम थे।[39]

६. द्वितीय कथा –

महाभारत के द्रोणपर्व[40] में नाभाग अम्बरीष राजा का वर्णन है। उन्होनें किये हुए यज्ञों के बारें में इस पर्व में विशेष जानकारी प्राप्त होती है। इन्होनें सात दिनों में इन्द्रपद प्राप्त किया यह सन्दर्भ भी प्राप्त होता है।

७. तृतीय कथा

भागवत पुराण के अनुसार, राजा अम्बरीष भगवान विष्णु के बहुत बड़े भक्त थे और सत्य का दृढ़ता से पालन करते थे। उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर, विष्णु ने अपना सुदर्शन चक्र अम्बरीष को दिया था। एक बार, कार्तिक मास में वैकुंठ एकादशी के दौरान, अम्बरीष ने द्वादशी व्रत रखा, जिसके लिए राजा एकादशी से उपवास शुरू करें और द्वादशी (बारहवें दिन) इसे छोड़ दे, तथा अपने सभी लोगों को भोजन कराए यह आवश्यक था। उसी समय इनके घर ऋषि दुर्वास अतिथी बनकर आये। राजा ने उनकी पूजा करके उन्हें भोजन के लिए आमंत्रित किया। ऋषिदुर्वास भी तथास्तु बोलकर अपने आह्निकादी कर्म करने के लिए यमुनानदी पर गये। उस दिन द्वादशी की तिथि थोडेही समय के लिये थी। दुर्वासजी को यह विदित नहीं था और अंबरीष ने भी उन्हें यह बताया नहीं था इसलिए दुर्वासा जी को अपने नित्य कर्म करके आने में देरी हुई। द्वादशी अतिक्रांत हो रही है, ऐसा जान कर अम्बरीष ने भगवान को नैवेद्य समर्पण करके अपने पुरोहितों की सलाह पर व्रतभंग ना हो इस उद्देश्य से भोजन करते हुए द्वादशी में भगवान का तीर्थ प्राशन करके पारणा

---

37 ऐतरेय ब्राह्मण ७.१३-१५।

38 वा.रा. १.६२,६३।

39 भारतीय चरित कोश | |पृष्ठ संख्या: 02 |,हिन्दी विश्वकोश, खण्ड 1 |

40 महा.७.६४

किया और ऋषि दुर्वास के भोजन के लिए आने की प्रतीक्षा की। दुर्वासा, जो अपने गुस्सैल स्वभाव के लिए जाने जाते थे, उन्होंने महसूस किया कि अम्बरीष ने अतिथि के भोजन करने से पहले अपना उपवास तोड़कर उनके प्रति उचित सम्मान का उल्लंघन किया है, और अपने क्रोध में उन्होंने अम्बरीष को मारने के लिए अपनी जटा से एक कृत्या निर्माण करके अम्बरीष पर छोड़ी तभी विष्णुजी के सुदर्शन चक्र ने उस कृत्या का नाश किया और दुर्वासा का पीछा करना शुरू कर दिया। दुर्वास सुरक्षा के लिए ब्रह्मा और शिव के पास गए । दोनों ने उन्हें बचाने में अपनी असमर्थता प्रकट की। बाद में दुर्वासा वहां से निकले तो चक्र भी उनके पीछे निकला, यह देख कर दुर्वासा विष्णुजी के पास गये। विष्णुजी ने कहा तुम अम्बरीष के पास वापस जाओ वह तुम्हारे लिए निराहार है उसका समाधान करो तब यह चक्र तुम्हारा पीछा छोडेगा । जब ऋषि दुर्वासा अम्बरीष के पास वापस आये इस बात को एक संवत्सर बीत गया था फिर भी अम्बरीष ने भोजन नहीं किया था ऋषि दुर्वासा जी को देखते ही वे परमहर्षित हुए और सुदर्शन चक्र की स्तुति की ताकी वह संतुष्ट होकर अपने स्थान पर चला जाये । अम्बरीष ने दुर्वासा जी को उत्तम प्रकार का भोजन कराया और अम्बरीषने खुद भी भोजन किया, भोजन के पश्चात् ऋषि दुर्वासा संतुष्ट होकर चले जाते है |[41]

भागवत के सन्दर्भ ९.५ के अनुसार राजा अम्बरीष ने अपने सम्पूर्ण राज्य का त्याग किया और तपस्या के लिए वनवास चले गयें।

कुछ विद्वानों का मत है कि इस कथा का मुख्य उद्देश्य विष्णु की महत्ता को श्रेष्ठ सिद्ध करना भी है।
अम्बरीष राजा और ऋषी के बारे में अनेक लोककथायें प्राप्त होती है।

८. लोककथा १- अम्बरीष राजा विष्णु के बहुत बड़े भक्त थे।

''दक्षिणे यस्य सद्भक्तः अम्बरीषः कृताञ्जलिः।
पृष्ठे लक्ष्मी स्थिता वन्दे भगवन्तं पुनः पुनः ।।''

जिसके दक्षिण में अम्बरीष जैसा कृतज्ञ सद्भक्त है, जिसके पिछे लक्ष्मी हैं, उस भगवान को मैं बार बार प्रणाम करता हूं। सोलापुर जिले का बार्शी तहसील महाराष्ट्र का प्रसिद्ध तीर्थक्षेत्र है। भारत में केवल बार्शी में ही श्रीविष्णु का 'भगवंत' नाम से एकमात्र प्रसिद्ध मंदिर है। इसका मूल नाम 'द्वादशीक्षेत्र' है। द्वादशी यह पद प्राकृत भाषा में 'बारस' का पर्यायवाची है। द्वादशी का अर्थ बारसपुर अथवा बार्शी है। यह नाम महान भक्त राजा अम्बरीष के 'साधनद्वादशी' व्रत से लोकप्रिय हुआ होगा ऐसा माना जाता है । राजा अम्बरीष की रक्षा के लिए श्रीविष्णु ने लक्ष्मी के साथ 'भगवंत' के रूप में यहां अवतार लिया। यहां एक विशाल मन्दिर है। जिस प्रकार परब्रह्म पांडुरंग भक्त पुंडलिक के दर्शन के लिए पंढरपुर आए थे, उसी प्रकार भक्त अम्बरीष की रक्षा के लिए श्रीविष्णु ने इस शहर में 'भगवान' के रूप में अवतार लिया था। अतः इस नगर में भक्तगण ' अम्बरीष वरद श्रीभगवान' शब्दों से भगवान की महिमा करते देखे जाते हैं। [42]

अम्बरीष बचपन से ही भगवंत भक्त थे। उन्हे संपत्ति, भौतिक सुख की कोई भी आसक्ति नहीं थी । यमुना नदी, जिसका दूसरा नाम कालिंदी नदी भी हैं, इस नदी के किनारे उनका वास्तव्य था । उन्हें अपनी राजसंपत्ति से कुछ नहीं मिला। उन्होनें अंगिरस ऋषि के यज्ञ में भाग लिया। इस यज्ञ से पुनः उनको संपत्ति मिली लेकिन वे विरक्त वृत्ति के होने के कारण उन्होनें सब वैभव का त्याग करके भगवंत प्राप्ति के लिए वन में एकांत में तपस्या की। बारह साल तपस्या करने के बाद भगवंत का दर्शन और दिव्य ज्ञान

41 भागवतपुराण ९.४-६

42 भाग.९.४.६

प्राप्त होने के बाद नारदजी के कहने पर उन्होनें एकादशी का 'साधन द्वादशी' व्रत किया । दशमी के दिन एक बार भोजन, एकादशी के दिन निर्जल उपवास, तथा द्वादशी की सुबह भगवंत के दर्शन-पूजन के बाद व्रत छोड़ना ऐसा त्रिदिवसीय व्रत था। व्रत समाप्ति पर उन्होनें दानधर्म किया । अम्बरीष राजा ने व्रत के बाद साठ लाख गोमाताओं का दान किया। इस कारण इंद्र के मन में इंद्रपद जाने के डर से भय निर्माण हुआ। इंद्र ने शीघ्रकोपी दुर्वासा ऋषी को अम्बरीष का सत्त्वहरण करने के लिए पृथ्वी पर दंडकारण्य के पंकपूर स्थान पर भेजा। जो पंकपूर आधुनिक काल में बार्शी नाम से प्रसिद्ध है। उस दिन एकादशी थी सायंकाल का समय था राजा अंबरीष ने उनका स्वागत किया। दुसरे दिन सुबह पुष्पावती नदी पर स्नान के पश्चात सूर्योदय के समय हम तुम्हारे पास आयेंगे ऐसा ऋषि दुर्वासजी ने अम्बरीष से कहा। लेकिन उन्होनें राजमहल जाने में बहुत विलंब किया। राजा ने व्रत भंग न हो इस लिये शास्त्राधार के अनुसार कौशिक मुनि की सलाह से केवल तीर्थप्राशन कर द्वादशी के पर्वकाल में उपवास छोड़ा। नदी से लौटे हुए दुर्वासा ऋषि ने इस बात को जानकर, कि राजा ने अतिथि के पहले भोजन किया है, राजा को शाप दिया कि उन्हें अनेक योनियों में जन्म लेना पडेगा। गुस्से में अपनी जटा से उन्होनें एक कृत्या निर्माण की। उस मायावी राक्षसी ने राजा अंबरीष को मारने की कोशिश की। परन्तु भगवंत ने राजा के रक्षणार्थ भेजे हुए सुदर्शन चक्र से उसका नाश किया। चक्र दुर्वासाजी के पीछे पड़ा। वे भगवान शंकर, ब्रह्मदेव और बाद में विश्वदेव के पास भी स्वरक्षा के लिये गये। लेकिन चक्र उनके पीछे ही पड़ा था। भगवान विष्णु ने ऋषि दुर्वासा को राजा की क्षमा मांगने के लिए कहा। दुर्वासजी ने राजा की क्षमा याचना की और राजा के कहने से सुदर्शन चक्र की गति शांत हो गई। वह सुदर्शन चक्र बार्शी नगरी में उत्तरेश्वर शिव मंदिर के सरोवर में शांत हुआ। ऋषि दुर्वास जी के शाप के कारण ही भगवंत ने अनेक जन्म दशावतार के रूप में लिये। यही भक्ति की अगाध महिमा है।

९. लोककथा २

महाराष्ट्र राज्य के जलगाव जिले के अमलनेर शहर में एक छोटी पहाड़ी, अम्बरीष के नाम से जानी जाती है। अम्बरीष ऋषी के स्मरण में परंपरा से इस पहाड़ी पर आषाढी द्वादशी के दिन यात्रा होती है। इस बारे में एक प्रसिद्ध कथा है। नारदमुनि के कहने पर राजा अम्बरीष ने एक वर्ष तक सभी एकादशियों का व्रत किया। उनका उद्यापन आषाढ़ी एकादशी के दूसरे दिन किया था । ऐसा माना जाता है की आषाढ़ी एकादशी के उपवास का आरंभ दशमी तिथि के मध्याह्न से होता है और आषाढ़ी द्वादशी तिथि को सम्पन्न होती है। उपवास निर्जला किया जाता है।

इसी पहाड़ी के बारे में ऐसा मानना है की वनवास के समय प्रभुरामचन्द्रजी ने इस पहाड़ी की महिमा सुनकर यही पर आषाढ़ी एकादशी का उपवास छोडा था।

१०. लोककथा ३

महाराष्ट्र राज्य के सातारा जिल्ले के औंध गाव के पास एक पहाड़ी है। पहाड़ी के पास एक छोटा तालाब और घने पेड़ पौधे होने के कारण अम्बरीष ऋषि ने वहां यज्ञ करने का विचार किया। किन्तु पहाड़ी पर रहनेवाला औंधासुर राक्षस सब ऋषिजनों के यज्ञकार्य में विघ्न लाता था। अतः अम्बरीष ऋषीने पहाडी पर निवास करनेवाली यमाई देवी, जिनका बड़ा प्राचीन और सुंदर मंदिर पहाड़ीपर स्थित है, उनकी भक्ति की। माता यमाई ने अम्बरीष ऋषि की याचना सुनकर औंधासुर का वध किया।[43]

---

[43] श्री यमाई देवी महात्म्यओवीबद्ध चरित्र स्तुती ओवी क्रमांक 50 - 55

११. लोककथा ४

अम्बरीष नाम का एक राजा था। जो निर्धारपूर्वक द्वादशी का व्रत करता था। हर समय वह हरिचिंतन में मग्न रहता था, अतः उसका व्रत भंग करने के लिए दुर्वासा ऋषि द्वादशी के दिन अतिथि बनकर राजा के यहाँ आये और द्वादशी की तिथि ऐसी थी की सूर्योदय के बाद एक घंटे के अंदर ही उपवास छोड़ना था। अतिथि बहुत श्रेष्ठ होता है। अम्बरीष को भय लगने लगा की यह पारणा सही समय पर पुरा होगा की नही। अतः अम्बरीष राजाने ऋषि दुर्वासाजी से विनती की और ऋषि से कहा कि आप एक घंटे में ही आपकी प्रातः साधना समाप्त कर वापस लौट आईये। दुर्वासा ऋषी नदी पर गये वहां अनुष्ठान करते समय एक घटिका बीत गया। वह समय पर वापस नहीं आ पाये। अंबरीषने अपना व्रत भंग ना हो इसलिए केवल तीर्थ प्राशन करके उपवास छोड़ा । उसी समय दुर्वासा ऋषि वहां पहुंचे। उन्होनें राजा का मुख देखकर, "अतिथि के बिना ही तुमने भोजन कैसे किया" यह कह कर क्रोधित होकर ऋषि दुर्वासा अंबरीष राजा को शाप देने लगे। अंबरीष राजाने भक्तवत्सल भगवान विष्णु का स्मरण किया। भगवान विष्णु अपने भक्त के रक्षण के लिए आये और उन्होंने 'तुम्हें हर योनी में जन्म लेना पड़ेगा' यह शाप ग्रहण किया। विष्णु ने दुर्वासा को कहा- ऋषि का वचन कभी भी झूठा नहीं होता, भक्त का रक्षण करना मेरा कर्तव्य है, अतः जो शाप आपने मेरे भक्त को दिया है, वह शाप मुझे ही लागू होगा। दुर्वासा ऋषी के शाप के प्रभाव से भक्तों का उद्धार करने हेतु भगवान ने लक्ष्मी सहित भूलोक पर दशावतार लिया [44]।

१२. अंबरीष एक ब्रह्मर्षी

नभग राजा का पुत्र अम्बरीष, परम दानशूर भगवद्भक्त और पराक्रमी भी था। इसने भूमिपर सात दिनो में जय प्राप्त किया और भूमिपर अधिपत्य पाया।[45] अम्बरीष को क्वचित् नाभाग ऐसे भी कहा गया है ।[46]

१३. निरीक्षण –

१. अम्बरीष का वर्णन विविध ग्रंथों में जब ऋषि के रूप में आता है तो वो राजर्षि है ऐसा ज्ञात होता है।
२. ऋग्वेद से लेकर रामायण, महाभारत और पुराणों की ऋषिकथाओं में अम्बरीष राजर्षि के रूप में उल्लेखित है।
३. ऋग्वेद, पुराण और आर्षमहाकाव्यों के आधार पर कहीं अम्बरीष ये राजा है तो कहीं ऋषि माना गया है। पूर्वाश्रम के राजा ने उत्तराश्रम में ऋषि जैसा कार्य किया अतः वे राजर्षि कहलाते है।
४. अम्बरीष सम्बन्धित कथाओं में भिन्न भिन्न नदीयों का उल्लेख मिलता है।
   उदा. अमलनेर – बोरी नदी, बार्शी – पुष्पावती नदी।
५. दुर्वासा ऋषि के केश से कृत्या नाम की राक्षसी का उल्लेख भागवत में प्राप्त है तो कहीं पर कृत्या के स्थान पर अन्य राक्षस का उल्लेख प्राप्त होता है।
६. अम्बरीष राजा होते हुवे भी उनके स्वभाव के कारण वे ऋषितुल्य है।
७. रामायण में जो अम्बरीष कथा है वह साक्षात् ऐतरेय ब्राह्मण के शुनःशेप कथा का विस्तार है। हरिश्चन्द्र और अम्बरीष यह एक ही राजा है क्या? उसपर विचार करना अत्यावश्यक है।
८. अम्बरीष राजा दिग्विजयी थे। उन्होंने सात दिन में इन्द्र को परास्त किया था। अतः बार्शी की लोककथा में इन्द्र उनसे ईर्षा करते है ऐसा ज्ञात होता है।

---

[44] श्री गुरुचरित्र सचित्र मराठी भाषांतर सहित पृष्ठ क्रमांक 27 आणि 28 अध्याय तिसरा ओवी क्रमांक 34 - 50

[45] महा. १२.१२४

[46] महा.७.६४

९. महाभारत का बडा प्रभाव लोककथाओं पर है।
१०. अम्बरीष राजा के व्रत के कारण ही ग्राम के नाम पडे है। उदाहरण - द्वादशीक्षेत्र – बारस- बारसी।
११. अंबरीष ऋषि के निवास के कारण भी क्षेत्र के नाम को निर्देशित करता है। उदाहरण अमळनेर में अम्बरीष ऋषि की पहाड़ी ।
१२. महाभारत, लिंगपुराण और औंध की लोककथाओं में जिस अम्बरीष राजा का वर्णन है वह पुराण और अन्यकथा में निर्देशित किया हुआ वही राजा या महर्षि है या अन्य कोई है इस पर अधिक विचार करना अपेक्षित है।
१३. अम्बरीष राजा सम्बन्धी केवल बार्शी की लोककथा में कौशिक ऋषि के पुरोहित के रूप में उल्लेख मिलता है।

प्रस्तुत शोधनिबंध में अम्बरीष राजा की राजा से ऋषि तक की यात्रा, तथा कई जगह ऋषि से राजा तक की यात्रा, उनके कार्य, विचार आदि को द्योतित करता है। इससे हमें राजा एवं राजर्षि के विभिन्न कार्यकलापों का विविध क्षेत्रों में प्रभाव भी ज्ञात होता है। ऐसे ही ऋचीक जैसे अन्य ऋषिओं के बारे विस्तृत जानकारी लेकर कार्य करना आवश्यक है। ऋषियों के अध्ययन से हमारी संस्कृति का और विभिन्न भौगोलिक स्थानों तथा उनके परस्पर सम्बन्धों का ज्ञान होता है। अतःइस प्रकार के अध्ययन तथा संशोधन से हमे भारतीय ज्ञानपरंपरा को समझने में सहयोग प्राप्त होगा।

ग्रन्थसंक्षेप

ऋ .	-ऋग्वेद ।
ना.सं.	- नानार्थसंग्रह
बौ.श्रौ.	- बौधायन श्रौतसूत्र।
महा.	- महाभारत।
वा.पु	- वायुपुराण।
वा.रा.	- वाल्मिकी रामायण।
वि.पु..	- विष्णुपुराण।
EI.	- Epigraphia Indica

संदर्भग्रंथसूचि -

[1] अमरसिंह. *अमरकोशः*. पुणे: वरदा बुक्स, १९९०.
[2] काशीकर, चिं.ग., सोनटक्के, नारायण. (सम्पा.), *ऋग्वेदसंहिता सायणाचार्यविरचितभाष्यसमेता ९-१० मण्डलात्मकः चतुर्थो भागः*पुणे: वैदिकसंशोधनमण्डल, १९०५.
[3] केतकर श्रीधर व्यंकटेश; *महाराष्ट्रीय ज्ञानकोश (शरीरखंड.) विभाग नववा.* पुणे महाराष्ट्रीय ज्ञानकोश मंडळ लिमिटेड नागपूर
[4] गर्बे, रिचर्ड (सम्पा.), *आपस्तम्बश्रौतसूत्रं रुद्रदत्तटीकासमेतं*, द्वितीयःखण्डः. कलकत्ता: एशियाटिक सोसायटी, १८८५.
[5] गोपाल, मदन. के.एस. गौतम (सं.). *युगों से भारत ।* प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, 1990.
[6] चन्द्रकान्ततर्कालङ्कारभट्ट. *गोभिलगृह्यसूत्रम्* . वासिष्ठ मिशन प्रेसः कलकत्ता, १९०८.
[7] चित्राव, सिध्देश्वरशास्त्री. *प्राचीनचरित्रकोश, प्रथमखण्ड.*पुणे: भारतीयचरित्रकोशमंडळ, १९३७.
[8] जोशी,महादेव (सम्पा). *भारतीय संस्कृतीकोश खंड १-१० (पुनर्मुद्रण).*पुणे.भारतीय संस्कृतीकोश मंडळ, २००९.

[9] जोशी,वसंत.*श्री यमाई देवी महात्म्य ओवीबद्ध चरित्र स्तुती* पुणे अशोक कुंभोजकर आदिमाता मासिक कार्यालय.

[10] ठाकुर, उदयनारायण सिंग. *द्राह्यायणगृह्यसूत्रम् रुद्रस्कन्दवृत्तिसहितम्.* मुझफ्फर्पुर: शास्तिन पब्लिशिंग हाउस, १९३४.

[11] डेविड शुलमैन, *"सुनहसेपा: द रिडल ऑफ़ फादर्स एंड संस" । द हंग्री गॉड: हिंदू टेल्स ऑफ़ फ़िलिसाइड एंड डिवोशन ।* यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस, 1993.

[12] धर्माधिकारी, त्रिविक्रम (सम्पा.) *तैत्तिरीय-संहिता, भट्टभास्कर-सायणाचार्य-विरचित-भाष्याभ्यां समेता.* पुणे: वैदिकसंशोधमण्डल,

[13] नरसिंहाचार्य:, *आपस्तम्बश्रौतसूत्रं धूर्तस्वामिभाष्यभूषितं श्रीरामाग्निचिद्वृत्तिसहितम्.*मैसूर: ओरियण्टल लायब्ररी प्रकाशनम्, १९४४.

[14] पाटसकर, भाग्यलता, *महाराष्ट्रीय ज्ञानकोश प्रस्तावनाखंड विभाग दुसरा वेदविद्या परिवर्धितसंस्करण.* पुणे: आदर्श संस्कृत शोध संस्था, २०१२.

[15] प्राचीन भारतीय ऐतिहासिक परंपरा , दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास।

[16] बावा रणवीरसिंग (सम्पा.), *आश्वलायनश्रौतसूत्रं देवत्रातभाष्यसङ्कलितम्.* होशियारपूरम्: पंजाबविद्यापीठम्, १९८६.

[17] भिडे,विद्याधर.(अनु.) *तैत्तिरीय-संहिता मराठी अनुवाद.* पुणे: पुणे विद्यापीठ, १९८७.

[18] मालवीय, सुधाकर (सम्पा.), *गोभिलगृह्यसूत्रम्.* वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत संस्थान, १९९७.

[19] यवेस बोनेफॉय और वेंडी डोनिगर , *एशियाई पौराणिक कथाएँ ।* शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस, 1993.

[20] लीलाधर शर्मा। *'पर्वतीय' भारतीय चरित कोश* ।दिल्ली। शिक्षा भारती।

[21] वेट्टम मणि.1975. *"पौराणिक विश्वकोश: महाकाव्य और पौराणिक साहित्य के विशेष संदर्भ के साथ एक व्यापक शब्दकोश"* । दिल्ली। मोतीलाल बनारसीदास, 1975.

[22] शास्त्री, महादेव (सम्पा.), *आपस्तम्बगृह्यसूत्रं सुदर्शनाचार्यविरचिततात्पर्यदर्शनसहितम्.* मैसूर: गव्हर्न्मेंट ऑफ मैसूर, १८९३.

[23] *हिन्दी विश्वकोश, खण्ड 1.* वाराणसी.नागरी प्रचारिणी सभा, 1972.

[24] *श्री गुरुचरित्र सचित्र मराठी भाषांतर सहित .* । त्र्यंबकेश्वर। श्री स्वामी सेवा प्रकाशन।

[25] Apte, S., *Sanskrit – English Dictionary.* Pune: Prasad Prakashan, 1959.

[26] Caland, W. (Ed.)., *Baudhāyana* Śrautasūtra *(*originally published *1904-13)*, Delhi: Munshiram Manoharalal, 1982.

[27] Caland. W. (Tr.)., Śāṅkhāyana Śrautasūtra. Nagpur: The International Acadamy of Indian Culture, 1953.

[28] Chintamani T. R., Nānārthasaṁgraha, Ajayapāla. Madras. Madras University Sanskrit Series. 10, 1937.

[29] Durgaprasad and K. P. Parab., Kathāsaritsāgara, Somadeva. Bombay.Nirnaysagar Press, 1889.

[30] G. H. Bhatt and others., Rāmāyaṇa, Vālmiīki, Balakāṇḍa to Yuddhakāṇḍa) (Uttarakāṇḍa) Bombay.Gujrati Printing Press, 1920.

[31] Jivānanda Vidyāsāgara. Agni purāṇa. Culcutta.Bibliotheca Indica, 1882.

[32] Kashikar, C.G. (Ed. and Tr.), Baudhāyan Śrautasūtra, Vol. I, III. Delhi: Motilal Banarasidass, 2003.

[33] Kulkarni. E. D. Dharaṇikośa, Dharanṇidāsa. Poona.Deccan College Post Graduate and Research Institute, 1968.

[34] Medinikara, Medinikośa or Nanārthaśabdakośa. Kashi Sanskrit Series. Banares. 41, 1916.

[35] Nilamani Mukhopadhyaya. Kūrmapurāṇa. Culcutta. Bibliotheca Indica, 1890.

[36] Ranade, H. G. (Tr.), Āśvalāyan Śrauta Sūtra. Poona: Ranade Publication, 1981.

[37] Sukthankar, Belvalkar. (Cr.Ed.), Sāntiparvan. Poona. Bhandarakar Oriental Research Institute, 1961.

[38] Sukthankar.V. S. and others (Cri. Ed.) Mahābhārata, Poona.Bhandarkar Oriental Research Institute, 1961.

[39] T. Ganapati Sastri. Arthaśāstra, Kauṭalya, Trivendrum Sanskrit Series, 79, 80, 82; with the comm. Srimüla of T. Ganapati Sastri, 1925.

[40] Thite, G. U. (Tr.). Āpastamba Śrautasūtra Text with English Translation & Notes Vol. *1*. Delhi: Bhāratīya Book Corporation, 2004.

[41] Vaidya P.L., Harivaṁśa. Poona. Bhandarkar Oriental Research Institute, 1969.

[42] Williams, Monier. 1899. Sanskrit -English Dictionay. London: Oxford University Press, 1899.

[43] Aitareyabrāhmaṇa, Poona.Anandshram Sanskrit Series. 32,33, 1931.

[44] Brahmāṇḍapurāṇa. Bombay. Venkateshwar Steam Press, 1935.

[45] Bhāgavatapurāṇa. Bombay. Nirnaysagar Press, 1950.

[46] Matsyapurāṇa, Poona. Anandshram Sanskrit Series. 54, 1907.

[47] Rāmāyaṇa, Vālmiīki, Balakāṇḍa to Yuddhakāṇḍa) (Uttarakāṇḍa) Baroda Oriental Institute, 1958.

[48] Skandpurāṇa, Bombay. Venkateshwar Steam Press, 1910.

[49] Vāyupurāṇa, Culcutta.Bibliotheca Indica, 1888.

[50] Viṣṇudharmottarapurāṇa.Bombay. Venkateshwar Steam Press.

[51] Viṣṇupurāṇa, Gorakhpur. Gita Press, 1933.

श्रीमद्भगवद्गीता-साङ्ख्यनिष्ठायाः भारतभावदीपशाङ्करभाष्ययोःदिशा विवेचनम्

Shrimadbhagvadgita-saankhyanishthaayah bharatabhavdeepshankarbhashyayoh disha vivechanam

शन्तनुः अयाचितः

Shantanu: Aayachitah:

रामकष्णमिशन् विवेकानन्दशैक्षणिकशोधसंस्थानम्, बेलूड मठः, हाओडा.
Ramakrishna Mission Vivekananda Educational Research Institute, Belur Math, Howrah.
Corresponding author email: shantanuc@gm.rkmvu.ac.in

सारांश

अस्मिन् शोधपत्रे शोधकर्त्रा श्रीमद्भगवद्गीतायां विद्यमानस्य साङ्ख्ययोगाध्यायस्य चिन्तनं भारतभावदीपशाङ्करभाष्ययोः आधारेण कृतं वर्तते। तत्रैव समग्रमहाभारतस्य व्याख्यातुः मतानुसारं साङ्ख्ययोगस्य वर्णनम्, कथञ्च अद्वैतवादमते साङ्ख्ययोगवर्णनम् इति विषयः समीक्षितः वर्तते।

मुख्यशब्दाः – श्रीमद्भगवद्गीता, साङ्ख्यशास्त्रम्, भारतभावदीपः, शाङ्करभाष्यम्

In this paper, the researcher has reflected on the chapter on Sankhya Yoga in Srimad Bhagavad Gita on the basis of the commentaries of Bharata Bhavadeep and Shankara. There, the description of Sankhya Yoga according to the interpreter of the entire Mahabharata, and how the description of Sankhya Yoga according to Advaita, is reviewed.

Keywords: Srimad Bhagavad Gita, Sankhya Shastra, Bharata Bhava Deep, Shankara Bhashya.

१. श्रीमद्भगवद्गीतायां साङ्ख्ययोगः

श्रीमद्भगवद्गीता ग्रन्थे साङ्ख्ययोगस्य वर्णनं द्वितीये अध्याये उपलभ्यते। अस्मिन् अध्याये भगवता कृतः गीतोपदेशः अर्जुनस्य तत्सदृशस्य सरलमतेः कस्यापि वा मनुष्यस्य हठादेव "अहमेषां मम एते"[i] इति भावनया भ्रान्तिं गतस्य अज्ञानदावानलदाहसमर्थ इति विद्वन्मतयः गदन्ति।

गीताशास्त्रं भगवतो मुखारविन्दान्निःसृतं, न वेदादीनामिव निःश्वासमात्रमिति तस्य वैलक्षण्यं सुतरां वरिवर्ति। यदार्जुनः "शिष्यस्तेहं शाधि मां त्वां प्रपन्नमिति"[ii] आह तदा परमकरुणया आप्लावितो भगवान् अर्जुनं मोहसागरात् समुद्दिधीर्षुः, तमेव च निमित्तिकृत्य अस्मान् अपि उद्दिधीर्षुः गीताशास्त्रं वेणुनादमिव मधुरं निनादयन् गीतवान् इति भक्तचित्तसंशोधकं गीताशास्त्रं राजते। तत्र अपि मोक्षस्य राजमार्गः साङ्ख्ययोगः अतितरां समुल्लसति। अहं मम इति भ्रान्तेः बाधकं, मोहनिवारकं यत् पारमार्थिकं ज्ञानं, नाहं कर्ता, भोक्ता अपि तु असंसारी नित्यसच्चिदानन्दस्वरूपः इति आकारकं तत् साङ्ख्यमिति निश्चयः। ईदृशे ज्ञाने सति मनुष्यस्य आत्मज्ञानात् मुक्तिरिति मुक्तावस्थाप्राप्तिः शास्त्रोक्ता अचिरेणैैव सिद्ध्यति। यावत् ज्ञाननिष्ठायोग्यता न जायते तावत् कर्माणि प्रकृत्यैव जायन्ते इति अविज्ञाय सर्वोपि कर्ताहमस्मि इति अनुभवति। यः कर्माभिमानवान् न भवति तस्य कर्माणि प्रकृत्यैव जायन्ते इति अभिज्ञानकारणात् कर्माणि बन्धकारणानि न भवन्ति। अत एव कर्माभिमानरहितस्य, विशुद्धचेतसो मोक्षफलसिद्धिहेतुः यः चिद्भावः स साङ्ख्ययोग इति

वदन्ति। ईदृशी साङ्ख्यनिष्ठा यस्य सिद्धा तस्यैव सर्वकर्मपरित्यागपूर्वके भिक्षाटनादौ अधिकारः, नान्यस्य। तस्मात् अर्जुनेन यत् भिक्षाशनादिना जीवनधारणं प्रार्थितमासीत् तस्य सर्वस्यापि क्षात्रधर्मपरित्यागेन कर्तुमिष्टस्य जीवनधारणस्य यः हेतुः, सः आत्मसंबन्धिषु जनेषु विद्यमानो अहं ममेति भावः तज्जनितौ शोकमोहौ च। न तु साङ्ख्यनिष्ठा। अथापि भिक्षाशनादिना जीवनधारणम्, अहिंसा इत्यादिकं यत् साङ्ख्यानां सर्वभूतेषु आत्मैकत्वं प्राप्तानां यथा उचितं प्रशस्तमिति शास्त्रसिद्धान्तः, तद्वतं सार्वात्म्यदर्शनं विहाय भिक्षाटनादिविषये एव आसक्तिं दर्शयता अर्जुनेन, प्राज्ञानां वाक्यानि ब्रुवता च विलक्षणं वैदुष्यं स्वस्मिन् विद्यते इति प्रदर्शितम्। एतदपि अनुचितमिति विजानता भगवता अर्जुनस्य द्विविधस्य अपि मोहस्य, स्वेषु अहं ममाभिमानरूपस्य मोहस्य, स्वधर्मः युद्धमेव अधर्म इति चिन्तितस्य द्वितीयस्य च मोहस्य निवारणाय साङ्ख्ययोगविषयकः अशोच्यान् अन्वशोचस्त्वमिति आरम्भः कृतः वर्तते।

भगवद्गीतायाम् अशोच्यानित्यारभ्य भगवता विंशतिश्लोकैः साङ्ख्यनिष्ठायाः प्रतिपादनं कृतं वर्तते। तद्विना मोहापगमस्य अशक्यत्त्वात्। अत एव साङ्ख्ययोगाध्यायगतानां अशोच्यानित्यादिना[iii] आरब्धानां तस्माद्युद्ध्यस्व भारत।[iv] इत्यन्तानां श्लोकानामर्थविचारेण साङ्ख्यनिष्ठामवगच्छामः।

२. भारतभावदीपे साङ्ख्ययोगः

भगवतः नीलकण्ठाचार्यस्य समग्रस्यापि महाभारतग्रन्थस्य व्याख्यातुः गीताशास्त्रव्याख्यानं, दार्शनिकानां पूज्यानां भगवत्पादानां च व्याख्यानं यद्यपि समानं सिद्धान्तमाश्रित्य वर्तते अथापि व्यख्यानशैलीभेदः, भगवत्पादानां विषये विद्यमानः नीलकण्ठाचार्याणामादरः सर्वमपि अत्यन्तं स्तुत्यं वर्तते। तस्मात् भगवत्पादपरवर्तिभिः नीलकण्ठाचार्यैः प्रस्थानत्रयशाङ्करभाष्यस्याद्वैतसिद्धान्तस्य दृढत्वं तावत् पञ्चमवेदत्वेन प्रसिद्धस्य महाभारतस्य भारतभावदीपाख्यटीकाविरचनद्वारेण साधितमिति भवयामः। भगवद्गीतायाः नीलकण्ठीये भारतभावदीपे विद्यमानं साङ्ख्ययोेगस्य वर्णनम् अतीव दीर्घं वर्तते अथापि तत्र विद्यमानान् शाङ्करभाष्यातिरिक्तान् कतिपयान् अष्टसु श्लोकेषु समधिगतान् विषयान् अत्र प्रकाशयामः।

अशोच्यानन्वशोचस्त्वमित्यादि श्लोके जीवापेतं वाव किलेदं म्रियते[v] इति श्रुतिमवतार्य भीष्मादीनां नित्यत्वं स्थापितं वर्तते। गतासून् इति पदे असुशब्दः प्राणाभिधः वर्तते। तस्य ग्रहणात् देहापेक्षया प्राणानां महत्त्वमिति वेदार्थः "प्राणो ह पिता प्राणो माता"[vi] इति श्रुत्या दृढीकृतं वर्तते। प्रज्ञावादशब्दे पण्डितानाम् अवादान् इति तार्किकव्याख्यानस्य निषेधश्च कृतः अस्ति।

ततश्च न त्वेवाहं जातु नासम्[vii] इति श्लोकेन देहानां भेदे सत्यपि आत्मा एक एव, नित्यश्च इति प्रोक्तं वर्तते। देहस्य अनात्मत्वे तत्पीडाद्यनुभवः अक्षवदभिमानमात्रादिति अध्यासपोषकदृष्टान्तेन देहादेरनात्मत्वं निश्चितमुक्तं वर्तते। देहस्तु प्राक्कर्मानुगुणं गच्छति। इति चोक्तम् अस्ति।

देहिनोस्मिन् इति श्लोकेन इष्टदेहवियोगजः शोको भवति एव इति आशङ्क्य बाल्यादि अवस्थाभेदे सत्यपि आत्मनः एकस्यैव स्थूलदेहे अनुवर्तमानस्य यथा बाल्यशरीरापगमे दुःखं न भवति। तथैव स्थूलशरीरात् शरीरान्तरप्राप्तिः अपि आत्मनः दुःखहेतुः न भवति। सूक्ष्मशरीरी एव आत्मा विविधानि मनुष्यतिर्यगादिशरीराणि लभते। इत्येतत् तथ्यं दृष्ट्वा धीराः शोकं न कुर्वन्ति। एक एव आत्मा इति द्योतयितुं प्रकृतश्लोके देहि इति प्रयोगः कृत इति , पूर्वश्लोके बहुवचनं तावत् उपाध्यभिप्रायेण इति अत्र नीलकण्ठाचार्याः स्पष्टं प्रदर्श्य आत्मनः उपाधित्वेन बहुत्वे, स्वरूपतश्च एकत्वे श्रुतिः प्रमाणयन्ति।[viii] यथा ज्योतिरात्मा विवस्वानपो भिन्ना बहुधैकोनुगच्छन्. उपाधिना क्रियते भेदरूपो देवः क्षेत्रेष्वेवमजोयमात्मा।। इति। एकत्वादेव आत्मनः विभुत्वमपि सिद्ध्यति।

आत्मा लिङ्गशरीरात् भिन्नः इति सिद्धे अपि आत्मनः दुःखानुभवः जायते एव। अत एव अनुभवजन्यज्ञानेन दुःखादीनामाश्रयः आत्मा इति वदामश्चेत्, ततश्च भीष्मादीनां बन्धूनां नाशनिमित्तं दुःखमनिवार्यमिति आयाति। एतादृशी आशङ्का अत्र नीलकण्ठाचार्यैः

प्रदर्शिता। तस्याः च वारणोपायः मात्रास्पर्शास्तु इति श्लोकेन प्रोक्तः। अत्रायं विशेषः - प्रमातुः प्रमाणद्वारा प्रमेयेण सम्बन्धाः सर्वे अपि अनित्याः अत एव सुखदुःखादयः अपि अनित्या एव। तस्मात् सोढव्यास्ते इति विवक्षितं वर्तते।अत्र प्रोक्तं यत् सुप्तिसमाधौग्रहावेशे सति यद्यपि अयमनर्थः प्रमातृत्वलक्षणः न भासते, तथापि जाग्रत्स्वप्नयोः स भासते एव। अतः अस्मिन् प्रसङ्गे कादाचित्कं भानमालक्ष्य अध्यासमवतारयति नीलकण्ठाचार्यः - अध्यासलक्षणं प्राह – यद्धि यत्राभेदेन कदाचित्भाति तत्तत्राध्यस्तं रज्ज्वामिव सर्पः।[ix] प्रमात्रादिकं च आत्मनि कदाचिदेव प्रतिभासते अतस्तन्मिथ्या। प्रमातृत्वादिकमेव मिथ्या चेत् प्रमातृत्व सम्बन्धेन सम्प्राप्तं दुःखादिकं तु सुतरां मिथ्या एव न तस्यात्मनि कथञ्चिदपि प्रसक्तिः। दुःखित्वप्रत्ययस्तु तादात्म्याध्यासादिति निश्चयः। अत एव तितिक्षा कर्तव्या इति अभिप्रायः प्राप्तः।

तितिक्षाफलम् अमृतत्वयोग्यत्वमिति प्रोक्तम्। जाग्रति, स्वप्ने, असम्प्रज्ञातसमाधौ वा मात्रास्पर्शाः यं न व्यथयन्ति। स पुरुषः मोक्षयोग्यो भवति इति भावः।

सुप्तिसमाध्यादौ देहभावस्य राहित्ये अपि जाग्रत्स्वप्नयोः तत् सत्त्वात्, तप्तायःपिण्डस्य दग्धृत्वमिव दुःखित्वं जाग्रत्स्वप्नयोः दुर्वारम् इति आशङ्का अत्र निरूपिता वर्तते। वस्तुतः अध्यासः तप्तायःपिण्डदृष्टान्तेन निरूप्यते। किन्तु अत्र पूर्वपक्षः तेनैव दृष्टान्तेन दृढीकृत इति विशेषः[x] वर्तते। ततश्च सर्वोपि उपाधिः मूलप्रकृतेः व्यापकत्वात् तस्याः मात्रारूप एव तस्मादपि उपाधेः निर्मूलं विनाशः नाभ्युपगन्तुं शक्य इति वदन् आचार्यः उपाधिसहितत्वमात्मनः नित्यमिति संसाध्य पूर्वपक्षं द्रढयति। इदमत्र आचार्यस्य निरूपणकौशलं विशिष्यते। अयं सर्वोपि विचारः नासतो विद्यते भाव इति श्लोकार्थव्याख्यानात् प्रागागतो वर्तते। ततश्च शङ्कानिरासाय नासतो इत्यादि विचारः प्रारब्धः। असतो नाम मिथ्याभूतस्य भावः कदाचिदपि न विद्यते इति कथयता भगवता प्रमात्रादिकानां मूलाज्ञानेन कल्पनमेव कृतं वर्तते इति सूचितम्। आत्मज्ञानेन मूलाज्ञाननिवृत्तौ पुनः प्रमातृत्वादीनामुद्भवो न जायते।

अत्रैव अप्रतीतिमात्रत्वं मिथ्यात्वं वा इति उक्त्वा, आत्मनोपि अप्रतीयमानत्वात् मिथ्यात्वमस्तु अथवा उभयोरपि आत्मानात्मनोः अप्रतीयमानत्वादेव समानता इति द्वयोरपि सत्यत्वमस्तु इति पक्षमादाय विचारः कृतः दृश्यते। अत्र अप्रतीयमानत्वमेव हेतुत्वेन उपन्यस्य कृतः आक्षेपः अत्यन्तं विशेषं गमयति। पुनश्च अयमत्रान्यो विशेषो। सुषुप्तादुत्थितस्य अनुभवपरामर्शात् तत्रापि सतः अस्तित्वम् सत्वम् अस्ति एव। अत्र श्रुतिमपि प्रमाणयति। यद्वै तन्न पश्यति पश्यन्वै तन्न पश्यति न हि द्रष्टुर्दृष्टेर्विपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वान्नतु तद्द्वितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यत्पश्येत् इति।[xi]

अन्तशब्दस्य याथात्म्यमिति अर्थः नीलकण्ठाचार्यैः प्रोक्तः वर्तते। स्वप्नपदार्थाः यथा जाग्रद्बोधेन बाध्यन्ते, तथैव जाग्रद्दृष्टा अपि तत्वज्ञानेन बाध्यन्त एव।

विशेषाशङ्का - रजतादिकं स्वरूपतो सद्रूपमेव भ्रमे अवभासते न तु स्वरूपेण असत् शशशृङ्गादिकम् इति।
समाधानम् - अध्यासे पूर्वानुभवमात्रमपेक्षते इति ब्रूमः। न तु वस्तुनः सत्त्वमपि। अतः दर्पणे प्रतिबिम्बिते नभसि अपि नैल्यारोपः भवति। नैल्यमसदेव सत् आरोप्यत इति।
अतः सतः ज्ञानमसतः बाधं जनयति। तदेव च ज्ञानं कैवल्यहेतुः भवति इति स्पष्टम्।

अविनाशि तु इति आरम्भः सतः सत्वे किं मानम् इति आशङ्का निवृत्तये जातः अस्ति। समाधानं तावत् येन सता इदं सर्वमपि ततं व्याप्तं वर्तते तत् सत् अविनाशि इति विद्यात्। अत्र विनाशो नाम पूर्वावस्थापरित्यागः। एतमेव विषयं विचारयता नीलकण्ठाचार्येण

अत्र परिणामविवर्तोपादनकारणयोः विचारः विहितः दृश्यते।श्रुतयश्चात्र उद्धृताः यथा- अजायमानो बहुधा विजायते जात एव न जायते को न्वेनं जनयेत्पुनः।[xii]

ततश्च कश्चिदपि आत्मनो विनाशं न कर्तुमर्हति इत्यत्र अन्यस्य विनाशहेतोरभावं वदन् आचार्यः- द्वितीयाद्वै भयं भवति[xiii] इति श्रुतेः प्रामाण्यं प्रादर्शयत्।

अन्तवन्त इति श्लोके तु आत्मनः सत्त्वं, तदतिरिक्तस्य असत्वं प्रतिपादयता भगवता नित्यानित्यविचारस्योपसंहारः कृत इति गम्यते। अस्मिन् श्लोके आत्मा अप्रमेय इति ज्ञायते। अतः प्रमाणाविषयत्वमात्मनः भगवता निरूपितम्। तत्रापि श्रुतिं प्रमाणयन्ति आचार्याः - तद्यथा - एतदप्रमयं ध्रुवम् इति। अप्रमयमित्यस्याप्रमेयमित्यर्थः। आत्मनि अप्रमेयत्वं निरूप्य प्रमाणानां प्रसरः तस्मिन्न जायते इति विषयमपि श्रुत्या प्रमाणयन्ति- येनेदं सर्वं विजानाति तं केन विजानीयाद्विज्ञातारमरे केन विजानीयात् इति।[xiv]

विशिष्टः श्लोकः अपि अत्र आचार्यैः समानीतः वर्तते -
प्रमाणमप्रमाणं च प्रमाभासस्तथैव च। यत्प्रसादात्प्रसिध्यन्ति तदसंभावना कुतः।।[xv] इत्थमत्र अष्टभिः श्लोकैः साङ्ख्यनिष्ठा प्रतिपादिता। ततश्च शाङ्करभाष्यदिशा आपाततो चिन्तयामः।

३. शाङ्करभाष्ये साङ्ख्ययोगः

शङ्करभगवत्पादैः आरम्भे पीठिकाभाष्ये एव गीताशास्त्रं शोकमोहादेरज्ञानस्यनिवर्तकं वासुदेवस्वरूपग्राहकञ्च इति स्पष्टं प्रोक्तं वर्तते। ततश्च तैः साङ्ख्ययोगाध्यायारम्भे एव ज्ञानकर्मसमुच्चयवादमुत्थाप्य तमःप्रकाशयोरिव अत्यन्तं विरुद्धं तत्वं समुपन्यस्तं वर्तते। गीतासु केवलात् ज्ञानादेव मुक्तिः प्रतिपादिता इति च आचार्यैः पौनःपुन्येन न्यगादि।

अशोच्यानिति श्लोके तु शोकसागरे निमग्नस्योद्धारः कथञ्चिदपि आत्मज्ञानव्यतिरिक्तेन साधनानुष्ठानेन कर्मणा वा न भवितुमर्हति इति पश्यता भगवता आत्मज्ञानसाधननिरूपणदक्षेन अशोच्यानित्यादि श्लोकेन परमार्थतो नित्यभूतानां भीष्मादीनां मरणम् आशङ्क्य शोकं कुर्वाणस्य अर्जुनस्य मूढः असि इति निन्दनं भगवत्पादैः कृतं वर्तते।न त्वेवाहमिति श्लोकार्थस्तावत् त्रिष्वपि कालेषु आत्मस्वरूपेण सर्वे भवामः इति कारणात् अशोच्याः भीष्मादय इति बोधयति।

आत्मनः नित्यत्वं तु देहे यथा बाल्यकौमार्ययौवनवार्धक्यावस्थासु सत्स्वपि आत्मनः अविकृतत्वं भवति तस्मात् देहान्तरप्राप्तावपि इति दृष्टान्तेन आत्मनः अविकारित्वं साधयित्वा, अविकृतत्वादेव निश्चित्य देहिनोस्मिन् इति श्लोके प्रोक्तं वर्तते। मात्रास्पर्शाः इन्द्रियाणां विषयैः सह सम्बन्धा, शीतोष्णादिफलप्रदाः अनित्याः अतः शीतोष्णादीनां सहनं कर्तव्यमिति उपदेशः मात्रास्पर्शास्तु इत्यत्र कृतः वर्तते। तत्फलं च अव्यथमानः सुखदुःखयोः प्राप्तौ समानः मोक्षाय कल्पते, समर्थो भवति इति द्वन्द्वसहिष्णुतायाः फलं प्रोक्तं वर्तते।

नासतो विद्यते भाव इति श्लोकेन बुद्धेः सदसद्रूपेण द्वैविध्यं प्रतिपाद्य सदसतोः बुद्ध्योः मध्ये सद्बुद्धिः सर्वदा अनुवर्तमाना अव्यभिचारीणी, असद्बुद्धिस्तु सर्वदा परिवर्तमाना व्यभिचारिणी इति दर्शितं वर्तते। अद्वैतसिद्धान्तरीत्या द्वन्द्वभूतस्य शीतोष्णादेः मिथ्यात्वं प्रोक्तं वर्तते। तच्च तत्त्वदर्शिनां दृष्टया सिद्धं भवति। यत् सत् सर्वदा सर्वकालेषु अस्ति इति उच्यते। तस्य किं स्वरूपमिति स्वरूपनिर्देशः अविनाशि तु तद्विद्धि इति श्लोकेन कृतः अस्ति।

वस्तुतः अप्रमेयः आत्मा, केनापि प्रमाणेन अगम्यः इति प्रोक्ते सति, आत्मनि प्रमाणमागम इति कथितस्य आगमस्य प्रामाण्यमपि आशङ्का विषयः इति जायते। अतः तत्र स्पष्टं कृतं यत् आगमप्रमाणं तावत् अज्ञाननिवृत्तिद्वारेणैव प्रमाणं भवति। न तु

वस्तुस्वरूपनिदर्शकत्वेन अतः आगमादेः प्रामाण्यमपि आरोपनिवर्तकत्वेन इति स्थिरं भवति। अत्र भगवत्पादमतेनापि न युद्धं कर्तव्यतया अत्र विहितमपि तु नित्य आत्मा इति बुद्ध्वा तद्विनाशमालोच्य युद्धादुपरमं मा कार्षीरिति एव उक्तं भवति। शोकेन युद्धादुपरमणं मा कुरु इति भगवदभिप्रायः। अयं स्वाभाविकतया प्रवृत्तस्य प्रवृत्तेः अनुवाद एव।

४. विवेचितविषये भारतभावदीपशाङ्करभाष्ययोः समीक्षा

अद्यावधि अस्माभिः नीलकण्ठीयशाङ्करभाष्ययोः दिशा भगवद्गीतायां प्रोक्तस्य साङ्ख्ययोगस्य विचारः कृतः वर्तते। अत्रैते विशेषाः भवन्ति-

- शङ्करभगवत्पादीयं भाष्यं तावत् द्वितीयाध्यायस्य एकादशश्लोकात् प्रारभ्यते। किन्तु नीलकण्ठप्रणीतं भारतभावदीपाख्यं व्याख्यानं समग्रस्यापि महाभारतस्य वर्तते अतः तेषा निरूपणं प्रतिपात्रदृष्ट्या विवेचनं प्राप्नोति इति विशेषः। तच्च समग्रस्यापि गीताशास्त्रस्यास्ति इति विशेषः वर्तते।
- भगवत्पादानां तावत् अद्वैतत्वनिरूपणपरता वर्णाश्रमधर्मलक्षणस्य निवृत्तिलक्षणस्य च धर्मस्य बोधकता विशेषतो अवगम्यते। किन्तु नीलकण्ठाचार्याः यद्यपि भगवत्पादानामनुवर्तिन अव अथापि तेषां निरूपणं भगवत्पादानामपेक्षया विशिष्टां शैलीमादधत् वरीवर्ति। तादृशीं शैलीं वयं समीक्षाकाले अधुनात्रैव क्वचित् क्वचित् दर्शयिष्यामः।
- शोकसागरे निमग्नस्य अर्जुनस्यात्मज्ञानादतिरिक्तमुद्धारसाधनं नास्ति इति पश्यता भगवता, अशोच्यानित्यारम्भः कृत इति भगवत्पादाः। किन्तु अर्जुनस्य देहनाशे आत्मनाशः, युद्धः स्वधर्मः सन्नपि अधर्मः इति मोहद्वयं प्राप्तायाः बुद्धेः आद्यं मोहं विनाशयितुं 11 तः 30 श्लोकसङ्ख्यां यावत् परमार्थतत्वनिरूपणं कृतमिति नीलकण्ठाचार्याः प्राहुः। इदमत्र निरूपणवैशद्यं नीलकण्ठाचार्याणां दृश्यते।
- भगवत्पादाः गीताव्याख्यानकाले प्रायः श्रुतिमाश्रित्य विचारं न कृतवन्तः। क्वचित् काठकोक्तां श्रुतिम् आनीनाय भगवान् इत्येवमाहुः, किन्तु मुखतः तैः श्रुतिकथनं, गीताभाष्ये निबन्धनं वा न विहितम् अतः, श्रुतिमनुद्धृत्य एव गीताभाष्यं कृतमिति भाष्यकृच्छैली संराजते। किन्तु विशेषतः नीलकण्ठाचार्यैः तत्र तत्र सति सम्भवे, श्रुतीनां समानयनम्, सम्भवे सति क्वचित् दृष्टान्तं दत्त्वा श्लोकार्थविस्तारसम्पादनं, अन्येषां कुतर्कपराणां दर्शनिकानां गीताश्लोकव्याख्यानव्याजेन खण्डनमित्यादयो मार्गा बहुधा समाश्रिताः दृश्यन्ते।
- अशोच्यानित्यत्र एव जीवापेतं वाव किलेदं म्रियते। , प्राणो ह पिता प्राणो माता इत्येवं श्रुतिवाक्यानि आश्रित्य विवेचनं कृतं वर्तते।
- अनुमानप्रमाणेन अपि तत्रैव आत्मनः देहादन्यत्वं साधितं वर्तते। तद्यथा – आत्मा देहादन्यः चेतनत्वात्, व्यतिरेकेण घटवत्। देहस्यापि चेतनत्वापत्तौ, देहो न चेतनः दृश्यत्त्वात् घटवत् इत्यादिरूपेण अनुमानं उपयुज्य देहाहीनां दृश्यत्वात् घटादिवत् अचेतनत्वं साधितं वर्तते। अतः नीलकण्ठाचार्याणां निरूपणशैली अनेकसाधनसामग्रीयुता दृश्यते।
- प्रतिश्लोकं शङ्कां समुत्पाद्य समाधानं कुर्वन्ति एव नीलकण्ठाचार्याः, तदा तेषां निरूपणेन अद्वैतशास्त्रविषये अस्माकं श्रद्धा प्रतिक्षणं वर्धमाना भवति इति विशेषः। यथा देहपीडया आत्मा असङ्गः कथं पीड्यते इति शङ्कायां प्रोक्तं यत्, यक्षादीनां यथा देहाभिमानः सुखदुःखपीडादि जनकः तद्वदिति अत्र समाधानं प्रोक्तं वर्तते। देहाभिमानवत एव पीडाद्यनुभव इति। अशरीरवतः आत्मनः सुखदुःखसंस्पर्शाभावः द्योत्यते।
- नीलकण्ठाचार्याः विभिन्नशास्त्रगतान् दृष्टान्तानीय विषयं स्थापयन्ति। तच्च मनोहरतां गच्छति। तद्यथा – कौलिकशास्त्रप्रसिद्धमेतत् इति वदन्तः आचार्याः प्रतिमायाः कण्टकवेधनेन देवदत्तो व्यथते इत्यत्र देवदत्तशरीरसम्बन्धी कण्टकवेधनं नास्ति। न च धातुवैषम्यादिनिमित्ता पीडा देवदत्ते अस्ति। अतः प्रतिमायाः पीडनेन जायमानं देवदत्तदुःखं पूर्वकर्मजमेव इति निश्चिन्वन्ति। तस्मात् शास्त्रान्तरप्रसिद्धदृष्टान्तप्रदानकौशलं नीलकण्ठश्रीचरणानां महत् वर्तते।

- भगवत्पादैः श्लोकार्थनिरूपणं कृतम् किन्तु पूर्वोत्तरश्लोकयोः भेदः इत्थं निरूपितो भवति इत्येवमाकारिका शैली तेषां न विद्यते। अथापि नीलकण्ठाचार्याः तावत् अशोच्यानिति श्लोके आत्मनः देहादन्यत्वं प्रोक्तम् । अस्मिन् श्लोके तु सूक्ष्मशरीरविशिष्टस्य व्यवहारदृष्ट्या नित्यत्वं साधितमिति श्लोकार्थयोरपि क्वचित् भेदं गमयन्ति।

५. उपसंहारः

भारतभावदीपशाङ्करभाष्ययोः आधारेण साङ्ख्ययोगस्य आपातवर्णनं कृतं वर्तते। अत्र समीक्षाकाले द्वयोरपि आचार्ययोः निरूपणविवेचनादिविषयकः भेदः अस्माभिः निरूपितः वर्तते। तेन यथा भगवत्पादीये गीताभाष्ये अस्माकं प्रवृत्तिः जायते तथैव आनन्दजनके नीलकण्ठीये अपि मतिमतां प्रवृत्तिः जायतात् इति भावये। यतो हि समग्रमहाभारतव्याख्यातुः वैभवं प्रतिश्लोकं वयमनुभवितु शक्नुमः। तेनैव सह भगवत्पादानां विषये समादरं च प्राप्नुमः। इति शम्।

उपयुक्तग्रन्थसूची

[1-4, 6] गोयन्दका, श्रीकृष्णहरिदास. (वि.सं. १९८८), श्रीमद्भगवद्गीता शाङ्करभाष्य हिन्दी अनुवाद सहित, गीताप्रेस, गोरखपुर.

[5-6] छान्दोग्योपनिषद् (सानुवाद शाङ्करभाष्यसहित), (वि.सं. २०५२), गीताप्रेस, गोरखपुर.

[9-10] किंजवडेकर, रामचन्द्रशास्त्री. (सं.पा)(१९३१), श्रीमन्महाभारतम्। तृतीयभागे-भीष्मपर्व। चतुर्धरवंशावतंसश्रीमन्नीलकण्ठविरचितभारतभावदीपाख्यटीकया समेतम्।, चित्रशाला प्रेस, पुण्यपत्तनम्।

[11] M ādhavānanda, Swami. (Ed.) (1950), The Bṛhadāraṇyaka Upaniṣad With The Commentary Of Śaṅkarācārya, Advaita Ashrama, Almora.

i भ. गी. शा. भा. पृ - २६

ii भ. गी. २. ७

iii भ. गी. २.११

iv भ. गी. २.१८

v छा. उ. ६.११.३

vi तत्रैव ७.१५.१

vii भ. गी. २.१२

viii पूर्वश्लोकयोर्गतासूनिति वयमिति च बहुवचनं उपाधिभेदाभिप्रायम् अत्र तु देहिन इत्येकवचनमुपधेयचिदात्मैक्याभिप्रायमिति ज्ञेयम्। तथा च श्रुतिरेकस्यात्मन औपाधिकं भेदमाहयथा ह्ययं ज्योतिरात्मा विवस्वानपो भिन्ना बहुधैकोऽनुगच्छन्। उपाधिना क्रियते भेदरूपो देवः क्षेत्रेष्वेवमजोऽयमात्मा इति। क्षेत्रेषु वक्ष्यमाणलक्षणेषु स्थूलसूक्ष्मदेहद्वयात्मकेषु।एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा इति च। एकत्वाच्च विभुत्वमप्यस्य सिद्धम्। तेन देहादीनामनित्यानामविभूनां च पराभिमतमात्मत्वं प्रत्याख्यातं वेदितव्यम्।

ix यद्धि यत्राभेदेन कदाचिद्भाति तत्तत्राध्यस्तं रज्ज्वामिव सर्पः। भ. गी. भा. भावदीप. २.१४

x ननु सुप्तिसमाध्यादौ त्यक्तोपाधेरात्मनः समदुःखसुखत्वेऽपि सोपाधिकदशायां तप्तायःपिण्डस्य दग्धृत्वमिव तस्य दुःखित्वं दुर्वारम्। तत्रैव २.१६

xi बृ. उ. ४.३.२३

xii तै. आ. ३.१३

xiii बृ. उ. १.४.२

xiv बृ. उ. २.४.१४

xv भ. गी. भा. भावदीप. २.१८